रावण को पुनः मन्दोदरी का समझाना

*** साँझ जानि दसकंधर भवन गयउ बिलखाइ। मंदोदरीं रावनहिं बहुरि कहा समुझाइ॥35 ख॥

भावार्थ:-

सन्ध्या हो गई जानकर दशग्रीव बिलखता हुआ (उदास होकर) महल में गया। मन्दोदरी ने रावण को समझाकर फिर कहा-॥35 (ख)॥

चौपाई :

*** कंत समुझि मन तजहु कुमतिही। सोह न समर तुम्हहि रघुपतिही॥ रामानुज लघु रेख खचाई। सोउ नहिं नाघेहु असि मनुसाई॥1॥

भावार्थ:-

हे कान्त! मन में समझकर (विचारकर) कुबुद्धि को छोड़ दो। आप से और श्री रघुनाथजी से युद्ध शोभा नहीं देता। उनके छोटे भाई ने एक जरा सी रेखा खींच दी थी, उसे भी आप नहीं लाँघ सके, ऐसा तो आपका पुरुषत्व है॥1॥

*** पिय तुम्ह ताहि जितब संग्रामा। जाके दूत केर यह कामा॥ कौतुक सिंधु नाघि तवलंका। आयउ कपि केहरी असंका॥2॥

भावार्थ:-

हे प्रियतम! आप उन्हें संग्राम में जीत पाएँगे, जिनके दूत का ऐसा काम है? खेल से ही समुद्र लाँघकर वह वानरों में सिंह (हनुमान्) आपकी लंका में निर्भय चला आया!॥2॥

*** रखवारे हति बिपिन उजारा। देखत तोहि अच्छ तेहिं मारा॥ जारि सकल पुर कीन्हेसि छारा। कहाँ रहा बल गर्ब तुम्हारा॥3॥

भावार्थ:-

रखवालों को मारकर उसने अशोक वन उजाड़ डाला। आपके देखते-देखते उसने अक्षयकुमार को मार डाला और संपूर्ण नगर को जलाकर राख कर दिया। उस समय आपके बल का गर्व कहाँ चला गया था?॥3॥

*** अब पति मृषा गाल जनि मारहु। मोर कहा कछु हृदयँ बिचारहु॥ पति रघुपतिहि नृपति जनि मानहु। अग जग नाथ अतुलबल जानहु॥4॥

भावार्थ:-

अब हे स्वामी! झूठ (व्यर्थ) गाल न मारिए (डींग न हाँकिए) मेरे कहने पर हृदय में कुछ विचार कीजिए। हे पति! आप श्री रघुपति को (निरा) राजा मत समझिए, बल्कि अग-जगनाथ (चराचर के स्वामी) और अतुलनीय बलवान् जानिए॥4॥

*** बान प्रताप जान मारीचा। तासु कहा नहिं मानेहि नीचा॥ जनक सभाँ अगनित भूपाला। रहे तुम्हउ बल अतुल बिसाला॥5॥

भावार्थ:-

श्री रामजी के बाण का प्रताप तो नीच मारीच भी जानता था, परन्तु आपने उसका कहना भी नहीं माना। जनक की सभा में अगणित राजागण थे। वहाँ विशाल और अतुलनीय बल वाले आप भी थे॥5॥

*** भंजि धनुष जानकी बिआही। तब संग्राम जितेहु किन ताही॥ सुरपति सुत जानइ बल थोरा। राखा जिअत आँखि गहि फोरा॥6॥

भावार्थ:-

वहाँ शिवजी का धनुष तोड़कर श्री रामजी ने जानकी को ब्याहा, तब आपने उनको संग्राम में क्यों नहीं जीता? इंद्रपुत्र जयन्त उनके बल को कुछ-कुछ जानता है। श्री रामजी ने पकड़कर, केवल उसकी एक आँख ही फोड़ दी और उसे जीवित ही छोड़ दिया॥6॥

*** सूपनखा कै गति तुम्ह देखी। तदपि हृदयँ नहिं लाज बिसेषी॥7॥

भावार्थ:-

शूर्पणखा की दशा तो आपने देख ही ली। तो भी आपके हृदय में (उनसे लड़ने की बात सोचते) विशेष (कुछ भी) लज्जा नहीं आती!॥7॥

दोहा :

*** बधि बिराध खर दूषनहि लीलाँ हत्यो कबंध। बालि एक सर मार्‌यो तेहि जानहु दसकंध॥36॥

भावार्थ:-

जिन्होंने विराध और खर-दूषण को मारकर लीला से ही कबन्ध को भी मार डाला और जिन्होंने बालि को एक ही बाण से मार दिया, हे दशकन्ध! आप उन्हें (उनके महत्व को) समझिए!॥36॥

चौपाई :

*** जेहिं जलनाथ बँधायउ हेला। उतरे प्रभु दल सहित सुबेला॥ कारुनीक दिनकर कुल केतू।दूत पठायउ तव हित हेतू॥1॥

भावार्थ:-

जिन्होंने खेल से ही समुद्र को बँधा लिया और जो प्रभु सेना सहित सुबेल पर्वत पर उतरपड़े, उन सूर्यकुल के ध्वजास्वरूप (कीर्ति को बढ़ाने वाले) करुणामय भगवान् ने आप ही के हित के लिए दूत भेजा॥1॥

*** सभा माझ जेहिं तव बल मथा। करि बरूथ महुँ मृगपति जथा॥ अंगद हनुमत अनुचर जाके। रन बाँकुरे बीर अति बाँके॥2॥

भावार्थ:-

जिसने बीच सभा में आकर आपके बल को उसी प्रकार मथ डाला जैसे हाथियों के झुंड में आकर सिंह (उसे छिन्न-भिन्न कर डालता है) रण में बाँके अत्यंत विकट वीर अंगद और हनुमान् जिनके सेवक हैं,॥2॥

*** तेहि कहँ पिय पुनि पुनि नर कहहू। मुधा मान ममता मद बहहू॥ अहह कंत कृत राम

बिरोधा। काल बिबस मन उपज न बोधा॥3॥
भावार्थ:-
हे पति! उन्हें आप बार-बार मनुष्य कहते हैं। आप व्यर्थ ही मान, ममता और मद का बोझ ढो रहे हैं! हा प्रियतम! आपने श्री रामजी से विरोध कर लिया और काल के विशेष वश होने से आपके मन में अब भी ज्ञान नहीं उत्पन्न होता॥3॥
*** काल दंड गहि काहु न मारा। हरइ धर्म बल बुद्धि बिचारा॥ निकट काल जेहि आवत साईं। तेहि भ्रम होइ तुम्हारिहि नाईं॥4॥
भावार्थ:-
काल दण्ड (लाठी) लेकर किसी को नहीं मारता। वह धर्म, बल, बुद्धि और विचार को हर लेता है। हे स्वामी! जिसका काल (मरण समय) निकट आ जाता है, उसे आप ही की तरह भ्रम हो जाता है॥4॥
दोहा :
*** दुइ सुत मरे दहेउ पुर अजहुँ पूर पिय देहु। कृपासिंधु रघुनाथ भजि नाथ बिमल जसु लेहु॥37॥
भावार्थ:-
आपके दो पुत्र मारे गए और नगर जल गया। (जो हुआ सो हुआ) हे प्रियतम! अब भी (इस भूल की) पूर्ति (समाप्ति) कर दीजिए (श्री रामजी से वैर त्याग दीजिए) और हे नाथ! कृपा के समुद्र श्री रघुनाथजी को भजकर निर्मल यश लीजिए॥37॥
चौपाई :
*** नारि बचन सुनि बिसिख समाना। सभाँ गयउ उठि होत बिहाना॥ बैठ जाइ सिंघासन फूली। अति अभिमान त्रास सब भूली॥1॥
भावार्थ:-
स्त्री के बाण के समान वचन सुनकर वह सबेरा होते ही उठकर सभा में चला गया और सारा भय भुलाकर अत्यंत अभिमान में फूलकर सिंहासन पर जा बैठा॥1॥

अंगद-राम संवाद, युद्ध की तैयारी

*** इहाँ राम अंगदहि बोलावा। आइ चरन पंकज सिरु नावा॥ अति आदर समीप बैठारी। बोले बिहँसि कृपाल खरारी॥2॥
भावार्थ:-
यहाँ (सुबेल पर्वत पर) श्री रामजी ने अंगद को बुलाया। उन्होंने आकर चरणकमलों में सिर नवाया। बड़े आदर से उन्हें पास बैठाकर खर के शत्रु कृपालु श्री रामजी हँसकर बोले॥2॥
*** बालितनय कौतुक अति मोही। तात सत्य कहुँ पूछउँ तोही॥ रावनु जातुधान कुल टीका। भुज

बल अतुल जासु जग लीका॥3॥
भावार्थ:-
हे बालि के पुत्र! मुझे बड़ा कौतूहल है। हे तात! इसी से मैं तुमसे पूछता हूँ, सत्य कहना। जो रावण राक्षसों के कुल का तिलक है और जिसके अतुलनीय बाहुबल की जगत्भर में धाक है,॥3॥
*** तासु मुकुट तुम्ह चारि चलाए। कहहु तात कवनी बिधि पाए॥ सुनु सर्बग्य प्रनतसुखकारी। मुकुट न होहिं भूप न गुन चारी॥4॥
भावार्थ:-
उसके चार मुकुट तुमने फेंके। हे तात! बताओ, तुमने उनको किस प्रकार से पाया! (अंगद ने कहा-) हे सर्वज्ञ! हे शरणागत को सुख देने वाले! सुनिए। वे मुकुट नहीं हैं। वे तोराजा के चार गुण हैं॥4॥
*** साम दान अरु दंड बिभेदा। नृप उर बसहिं नाथ कह बेदा॥ नीति धर्म के चरन सुहाए। अस जियँ जानि पहिं आए॥5॥

माल्यवान का रावण को समझाना

दोहा :
*** कछु मारे कछु घायल कछु गढ़ चढ़े पराइ। गर्जहिं भालु बलीमुख रिपु दल बलबिचलाइ॥47॥
भावार्थ:-
कुछ मारे गए, कुछ घायल हुए कुछ भागकर गढ़ पर चढ़ गए। अपने बल से शत्रुदल को विचलित करके रीछ और वानर (वीर) गरज रहे हैं॥47॥
चौपाई :
*** निसा जानि कपि चारिउ अनी। आए जहाँ कोसला धनी॥ राम कृपा करि चितवा सबही। भए बिगतश्रम बानर तबही॥1॥
भावार्थ:-
रात हुई जानकर वानरों की चारों सेनाएँ (टुकड़ियाँ) वहाँ आईं, जहाँ कोसलपति श्री रामजी थे। श्री रामजी ने ज्यों ही सबको कृपा करके देखा त्यों ही ये वानर श्रमरहित हो गए॥1॥
*** उहाँ दसानन सचिव हँकारे। सब सन कहेसि सुभट जे मारे॥ आधा कटकु कपिन्ह संघारा। कहहु बेगि का करिअ बिचारा॥2॥
भावार्थ:-
वहाँ (लंका में) रावण ने मंत्रियों को बुलाया और जो योद्धा मारे गए थे, उन सबको सबसे बताया। (उसने कहा-) वानरों ने आधी सेना का संहार कर दिया! अब शीघ्र बताओ, क्या विचार (उपाय) करना चाहिए?॥2॥
*** माल्यवंत अति जरठ निसाचर। रावन मातु पिता मंत्री बर॥ बोला बचन नीति अति पावन।

सुनहु तात कछु मोर सिखावन॥3॥
भावार्थ:-
माल्यवंत (नाम का एक) अत्यंत बूढ़ा राक्षस था। वह रावण की माता का पिता (अर्थात् उसका नाना) और श्रेष्ठ मंत्री था। वह अत्यंत पवित्र नीति के वचन बोला- हे तात! कुछ मेरी सीख भी सुनो-॥3॥
*** जब ते तुम्ह सीता हरि आनी। असगुन होहिं न जाहिं बखानी॥ बेद पुरान जासु जसुगायो। राम बिमुख काहुँ न सुख पायो॥4॥
भावार्थ:-
जब से तुम सीता को हर लाए हो, तब से इतने अपशकुन हो रहे हैं कि जो वर्णन नहीं किए जा सकते। वेद-पुराणों ने जिनका यश गाया है, उन श्री राम से विमुख होकर किसी ने सुख नहीं पाया॥4॥
दोहा :
*** हिरन्याच्छ भ्राता सहित मधु कैटभ बलवान। जेहिं मारे सोइ अवतरेउ कृपासिंधुभगवान॥48 क॥
भावार्थ:-
भाई हिरण्यकशिपु सहित हिरण्याक्ष को बलवान् मधु-कैटभ को जिन्होंने मारा था, वे ही कृपा के समुद्र भगवान् (रामरूप से) अवतरित हुए हैं॥ 48 (क)॥

मासपारायण, पचीसवाँ विश्राम
भावार्थ:-
हे नाथ! वेद कहते हैं कि साम, दान, दण्ड और भेद- ये चारों राजा के हृदय में बसते हैं। ये नीति-धर्म के चार सुंदर चरण हैं, (किन्तु रावण में धर्म का अभाव है) ऐसा जी में जानकर ये नाथ के पास आ गए हैं॥5॥
दोहा :
*** धर्महीन प्रभु पद बिमुख काल बिबस दससीस। तेहि परिहरि गुन आए सुनहु कोसलाधीस॥38 क॥
भावार्थ:-
दशशीश रावण धर्महीन, प्रभु के पद से विमुख और काल के वश में है, इसलिए हे कोसलराज! सुनिए, वे गुण रावण को छोड़कर आपके पास आ गए हैं॥ 38 (क)॥
*** परम चतुरता श्रवन सुनि बिहँसे रामु उदार। समाचार पुनि सब कहे गढ़ केबालिकुमार॥38 ख॥
भावार्थ:-

अंगद की परम चतुरता (पूर्ण उक्ति) कानों से सुनकर उदार श्री रामचंद्रजी हँसने लगे। फिर बालि पुत्र ने किले के (लंका के) सब समाचार कहे॥38 (ख)॥

चौपाई :

*** रिपु के समाचार जब पाए। राम सचिव सब निकट बोलाए॥ लंका बाँके चारि दुआरा। केहि बिधि लागिअ करहु बिचारा॥1॥

भावार्थ:-

जब शत्रु के समाचार प्राप्त हो गए, तब श्री रामचंद्रजी ने सब मंत्रियों को पास बुलाया (और कहा-) लंका के चार बड़े विकट दरवाजे हैं। उन पर किस तरह आक्रमण किया जाए, इस पर विचार करो॥1॥

*** तब कपीस रिच्छेस बिभीषन। सुमरि हृदयँ दिनकर कुल भूषन॥ करि बिचार तिन्ह मंत्र दृढ़ावा। चारि अनी कपि कटकु बनावा॥2॥

भावार्थ:-

तब वानरराज सुग्रीव, ऋक्षपति जाम्बवान् और विभीषण ने हृदय में सूर्य कुल के भूषणश्री रघुनाथजी का स्मरण किया और विचार करके उन्होंने कर्तव्य निश्चित किया। वानरों की सेना के चार दल बनाए॥2॥

*** जथाजोग सेनापति कीन्हे। जूथप सकल बोलि तब लीन्हे॥ प्रभु प्रताप कहि सब समुझाए। सुनि कपि सिंघनाद करि धाए॥3॥

भावार्थ:-

और उनके लिए यथायोग्य (जैसे चाहिए वैसे) सेनापति नियुक्त किए। फिर सब यूथपतियों को बुला लिया और प्रभु का प्रताप कहकर सबको समझाया, जिसे सुनकर वानर, सिंह के समान गर्जना करके दौड़े॥3॥

*** हरषित राम चरन सिर नावहिं। गहि गिरि सिखर बीर सब धावहिं॥ गर्जहिं तर्जहिं भालु कपीसा। जय रघुबीर कोसलाधीसा॥4॥

भावार्थ:-

वे हर्षित होकर श्री रामजी के चरणों में सिर नवाते हैं और पर्वतों के शिखर ले-लेकर सब वीर दौड़ते हैं। 'कोसलराज श्री रघुवीरजी की जय हो' पुकारते हुए भालू और वानरगरजते और ललकारते हैं॥4॥

*** जानत परम दुर्ग अति लंका। प्रभु प्रताप कपि चले असंका॥ घटाटोप करि चहुँ दिसिघेरी॥ मुखहिं निसार बजावहिं भेरी॥5॥

भावार्थ:-

लंका को अत्यंत श्रेष्ठ (अजेय) किला जानते हुए भी वानर प्रभु श्री रामचंद्रजी केप्रताप से निडर

होकर चले। चारों ओर से घिरी हुई बादलों की घटा की तरह लंका को चारोंदिशाओं से घेरकर वे मुँह से डंके और भेरी बजाने लगे॥5॥

युद्धारम्भभ

दोहा :

*** जयति राम जय लछिमन जय कपीस सुग्रीव। गर्जहिं सिंहनाद कपि भालु महा बल सींव॥39॥

भावार्थ:-

महान् बल की सीमा वे वानर-भालू सिंह के समान ऊँचे स्वर से 'श्री रामजी की जय', 'लक्ष्मणजी की जय', 'वानरराज सुग्रीव की जय'- ऐसी गर्जना करने लगे॥39॥

चौपाई :

*** लंकाँ भयउ कोलाहल भारी। सुना दसानन अति अहँकारी॥ देखहु बनरन्ह केरि ढिठाई। बिहँसि निसाचर सेन बोलाई॥1॥

भावार्थ:-

लंका में बड़ा भारी कोलाहल (कोहराम) मच गया। अत्यंत अहंकारी रावण ने उसे सुनकर कहा- वानरों की ढिठाई तो देखो! यह कहते हुए हँसकर उसने राक्षसों की सेना बुलाई॥1॥

*** आए कीस काल के प्रेरे। छुधावंत सब निसिचर मेरे॥ बअस कहि अट्टहास सठ कीन्हा। गृह बैठें अहार बिधि दीन्हा॥2॥

भावार्थ:-

बंदर काल की प्रेरणा से चले आए हैं। मेरे राक्षस सभी भूखे हैं। विधाता ने इन्हें घर बैठे भोजन भेज दिया। ऐसा कहकर उस मूर्ख ने अट्टहास किया (वह बड़े जोर से ठहाका मारकर हँसा)॥2॥

*** सुभट सकल चारिहुँ दिसि जाहू। धरि धरि भालु कीस सब खाहू॥ उमा रावनहि अस अभिमाना। जिमि टिट्टिभ खग सूत उताना॥3॥

भावार्थ:-

(और बोला-) हे वीरों! सब लोग चारों दिशाओं में जाओ और रीछ-वानर सबको पकड़-पकड़कर खाओ। (शिवजी कहते हैं-) हे उमा! रावण को ऐसा अभिमान था जैसा टिटिहिरी पक्षी पैर ऊपर की ओर करके सोता है (मानो आकाश को थाम लेगा)॥3॥

*** चले निसाचर आयसु मागी। गहि कर भिंडिपाल बर साँगी॥ तोमर मुद्गर परसु प्रचंडा।सूल कृपान परिघ गिरिखंडा॥4॥

भावार्थ:-

आज्ञा माँगकर और हाथों में उत्तम भिंदिपाल, साँगी (बरछी), तोमर, मुद्गर, प्रचण्ड फरसे, शूल, दोधारी तलवार, परिघ और पहाड़ों के टुकड़े लेकर राक्षस चले॥4॥

*** जिमि अरुनोपल निकर निहारी। धावहिं सठ खग मांस अहारी॥ चोंच भंग दुख तिन्हहि न

सूझा। तिमि धाए मनुजाद अबूझा॥5॥
भावार्थ:-
जैसे मूर्ख मांसाहारी पक्षी लाल पत्थरों का समूह देखकर उस पर टूट पड़ते हैं, (पत्थरों पर लगने से) चोंच टूटने का दुःख उन्हें नहीं सूझता, वैसे ही ये बेसमझ राक्षस दौड़े॥5॥
दोहा :
*** नानायुध सर चाप धर जातुधान बल बीर। कोट कँगूरन्हि चढ़ि गए कोटि कोटि रनधीर॥40॥
भावार्थ:-
अनेकों प्रकार के अस्त्र-शस्त्र और धनुष-बाण धारण किए करोड़ों बलवान् और रणधीर राक्षस वीर परकोटे के कँगूरों पर चढ़ गए॥40॥
चौपाई :
*** कोट कँगूरन्हि सोहहिं कैसे। मेरु के सृंगनि जनु घन बैसे॥ बाजहिं ढोल निसान जुझाऊ। सुनि धुनि होइ भटन्हि मन चाऊ॥1॥
भावार्थ:-
वे परकोटे के कँगूरों पर कैसे शोभित हो रहे हैं, मानो सुमेरु के शिखरों पर बादल बैठे हों। जुझाऊ ढोल और डंके आदि बज रहे हैं, (जिनकी) ध्वनि सुनकर योद्धाओं के मन में (लड़ने का) चाव होता है॥1॥
*** बाजहिं भेरि नफीरि अपारा। सुनि कादर उर जाहिं दरारा॥ देखिन्ह जाइ कपिन्ह के ठट्टा। अति बिसाल तनु भालु सुभट्टा॥2॥
भावार्थ:-
अगणित नफीरी और भेरी बज रही है, (जिन्हें) सुनकर कायरों के हृदय में दरारें पड़ जाती हैं। उन्होंने जाकर अत्यन्त विशाल शरीर वाले महान् योद्धा वानर और भालुओं के ठट्ट (समूह) देखे॥2॥
*** धावहिं गनहिं न अवघट घाटा। पर्बत फोरि करहिं गहि बाटा॥ कटकटाहिं कोटिन्ह भट गर्जहिं। दसन ओठ काटहिं अति तर्जहिं॥3॥
भावार्थ:-
(देखा कि) वे रीछ-वानर दौड़ते हैं, औघट (ऊँची-नीची, विकट) घाटियों को कुछ नहीं गिनते। पकड़कर पहाड़ों को फोड़कर रास्ता बना लेते हैं। करोड़ों योद्धा कटकटाते और गर्जते हैं। दाँतों से होठ काटते और खूब डपटते हैं॥3॥
*** उत रावन इत राम दोहाई। जयति जयति जय परी लराई॥ निसिचर सिखर समूह ढहावहिं। कूदि धरहिं कपि फेरि चलावहिं॥4॥
भावार्थ:-
उधर रावण की और इधर श्री रामजी की दुहाई बोली जा रही है। 'जय' 'जय' 'जय' की ध्वनि होते

ही लड़ाई छिड़ गई। राक्षस पहाड़ों के ढेर के ढेर शिखरों को फेंकते हैं। वानर कूदकर उन्हें पकड़ लेते हैं और वापस उन्हीं की ओर चलाते हैं॥4॥

छंद :

*** धरि कुधर खंड प्रचंड मर्कट भालु गढ़ पर डारहीं। झपटहिं चरन गहि पटकि महि भजि चलत बहुरि पचारहीं॥ अति तरल तरुन प्रताप तरपहिं तमकि गढ़ चढ़ि चढ़ि गए। कपि भालु चढ़ि मंदिरन्ह जहँ तहँ राम जसु गावत भए॥

भावार्थ:-

प्रचण्ड वानर और भालू पर्वतों के टुकड़े ले-लेकर किले पर डालते हैं। वे झपटते हैं और राक्षसों के पैर पकड़कर उन्हें पृथ्वी पर पटककर भाग चलते हैं और फिर ललकारते हैं। बहुत ही चंचल और बड़े तेजस्वी वानर-भालू बड़ी फुर्ती से उछलकर किले पर चढ़-चढ़कर गए और जहाँ-तहाँ महलों में घुसकर श्री रामजी का यश गाने लगे।

दोहा :

*** एकु एकु निसिचर गहि पुनि कपि चले पराइ। ऊपर आपु हेठ भट गिरहिं धरनि पर आइ॥41॥

भावार्थ:-

फिर एक-एक राक्षस को पकड़कर वे वानर भाग चले। ऊपर आप और नीचे (राक्षस) योद्धा- इस प्रकार वे (किले से) धरती पर आ गिरते हैं॥41॥

चौपाई :

*** राम प्रताप प्रबल कपिजूथा। मर्दहिं निसिचर सुभट बरूथा॥ चढ़े दुर्ग पुनि जहँ तहँ बानर। जय रघुबीर प्रताप दिवाकर॥1॥

भावार्थ:-

श्री रामजी के प्रताप से प्रबल वानरों के झुंड राक्षस योद्धाओं के समूह के समूह मसल रहे हैं। वानर फिर जहाँ-तहाँ किले पर चढ़ गए और प्रताप में सूर्य के समान श्री रघुवीर की जय बोलने लगे॥1॥

*** चले निसाचर निकर पराई। प्रबल पवन जिमि घन समुदाई॥ हाहाकार भयउ पुर भारी। रोवहिं बालक आतुर नारी॥2॥

भावार्थ:-

राक्षसों के झुंड वैसे ही भाग चले जैसे जोर की हवा चलने पर बादलों के समूह तितर-बितर हो जाते हैं। लंका नगरी में बड़ा भारी हाहाकार मच गया। बालक, स्त्रियाँ और रोगी (असमर्थता के कारण) रोने लगे॥2॥

*** सब मिलि देहिं रावनहि गारी। राज करत एहिं मृत्यु हँकारी॥ निज दल बिचल सुनी तेहिं

काना। फेरि सुभट लंकेस रिसाना॥3॥

भावार्थ:-

सब मिलकर रावण को गालियाँ देने लगे कि राज्य करते हुए इसने मृत्यु को बुला लिया।रावण ने जब अपनी सेना का विचलित होना कानों से सुना, तब (भागते हुए) योद्धाओं को लौटाकर वह क्रोधित होकर बोला-॥3॥

*** जो रन बिमुख सुना मैं काना। सो मैं हतब कराल कृपाना॥ सर्बसु खाइ भोग करि नाना। समर भूमि भए बल्लभ प्राना॥4॥

भावार्थ:-

मैं जिसे रण से पीठ देकर भागा हुआ अपने कानों सुनूँगा, उसे स्वयं भयानक दोधारी तलवार से मारूँगा। मेरा सब कुछ खाया, भाँति-भाँति के भोग किए और अब रणभूमि में प्राण प्यारे हो गए!॥4॥

*** उग्र बचन सुनि सकल डेराने। चले क्रोध करि सुभट लजाने॥ सन्मुख मरन बीर कै सोभा।तब तिन्ह तजा प्रान कर लोभा॥5॥

भावार्थ:-

रावण के उग्र (कठोर) वचन सुनकर सब वीर डर गए और लज्जित होकर क्रोध करके युद्ध के लिए लौट चले। रण में (शत्रु के) सम्मुख (युद्ध करते हुए) मरने में ही वीर की शोभा है। (यह सोचकर) तब उन्होंने प्राणों का लोभ छोड़ दिया॥5॥

दोहा :

*** बहु आयुध धर सुभट सब भिरहिं पचारि पचारि। ब्याकुल किए भालु कपि परिघत्रिसूलन्हि मारि॥42॥

भावार्थ:-

बहुत से अस्त्र-शस्त्र धारण किए, सब वीर ललकार-ललकारकर भिड़ने लगे। उन्होंने परिघों और त्रिशूलों से मार-मारकर सब रीछ-वानरों को व्याकुल कर दिया॥42॥

चौपाई :

*** भय आतुर कपि भागत लागे। जद्यपि उमा जीतिहहिं आगे॥ कोउ कह कहँ अंगद हनुमंता। कहँ नल नील दुबिद बलवंता॥1॥

भावार्थ:-

(शिवजी कहते हैं-) वानर भयातुर होकर (डर के मारे घबड़ाकर) भागने लगे, यद्यपि हे उमा! आगे चलकर (वे ही) जीतेंगे। कोई कहता है- अंगद-हनुमान् कहाँ हैं? बलवान् नल, नील और द्विविद कहाँ हैं?॥1॥

***निज दल बिकल सुना हनुमाना। पच्छिम द्वार रहा बलवाना॥ मेघनाद तहँ करइ लराई। टूट न द्वार परम कठिनाई॥2॥

भावार्थ:-

हनुमान्‌जी ने जब अपने दल को विकल (भयभीत) हुआ सुना, उस समय वे बलवान् पश्चिम द्वार पर थे। वहाँ उनसे मेघनाद युद्ध कर रहा था। वह द्वार टूटता न था, बड़ी भारी कठिनाई हो रही थी॥2॥

*** पवनतनय मन भा अति क्रोधा। गर्जेउ प्रबल काल सम जोधा॥ कूदि लंक गढ़ ऊपर आवा। गहि गिरि मेघनाद कहुँ धावा॥3॥

भावार्थ:-

तब पवनपुत्र हनुमान्‌जी के मन में बड़ा भारी क्रोध हुआ। वे काल के समान योद्धा बड़ेजोर से गरजे और कूदकर लंका के किले पर आ गए और पहाड़ लेकर मेघनाद की ओर दौड़े॥3॥

*** भंजेउ रथ सारथी निपाता। ताहि हृदय महुँ मारेसि लाता॥ दुसरें सूत बिकल तेहि जाना। स्यंदन घालि तुरत गृह आना॥4॥

भावार्थ:-

रथ तोड़ डाला, सारथी को मार गिराया और मेघनाद की छाती में लात मारी। दूसरा सारथी मेघनाद को व्याकुल जानकर, उसे रथ में डालकर, तुरंत घर ले आया॥4॥

दोहा :

*** अंगद सुना पवनसुत गढ़ पर गयउ अकेल। रन बाँकुरा बालिसुत तरकि चढ़ेउ कपि खेल॥43॥

भावार्थ:-

इधर अंगद ने सुना कि पवनपुत्र हनुमान् किले पर अकेले ही गए हैं, तो रण में बाँके बालि पुत्र वानर के खेल की तरह उछलकर किले पर चढ़ गए॥43॥

चौपाई :

*** जुद्ध बिरुद्ध क्रुद्ध द्वौ बंदर। राम प्रताप सुमिरि उर अंतर॥ रावन भवन चढ़े द्वौ धाई। करहिं कोसलाधीस दोहाई॥1॥

भावार्थ:-

युद्ध में शत्रुओं के विरुद्ध दोनों वानर क्रुद्ध हो गए। हृदय में श्री रामजी केप्रताप का स्मरण करके दोनों दौड़कर रावण के महल पर जा चढ़े और कोसलराज श्री रामजी की दुहाई बोलने लगे॥1॥

*** कलस सहित गहि भवनु ढहावा। देखि निसाचरपति भय पावा॥ नारि बृंद कर पीटहिं छाती। अब दुइ कपि आए उतपाती॥2॥

भावार्थ:-

उन्होंने कलश सहित महल को पकड़कर ढहा दिया। यह देखकर राक्षस राज रावण डर गया। सब स्त्रियाँ हाथों से छाती पीटने लगीं (और कहने लगीं-) अब की बार दो उत्पाती वानर (एक साथ) आ गए हैं॥2॥

*** कपिलीला करि तिन्हहि डेरावहिं। रामचंद्र कर सुजसु सुनावहिं॥ पुनि कर गहि कंचनके खंभा।

कहेन्हि करिअ उतपात अरंभा॥3॥

भावार्थ:-

वानरलीला करके (घुड़की देकर) दोनों उनको डराते हैं और श्री रामचंद्रजी का सुंदर यश सुनाते हैं। फिर सोने के खंभों को हाथों से पकड़कर उन्होंने (परस्पर) कहा कि अब उत्पात आरंभ किया जाए॥3॥

*** गर्जि परे रिपु कटक मझारी। लागे मर्दै भुज बल भारी॥ काहु हि लात चपेटन्हि केहू। भजहु न रामहि सो फल लेहू॥4॥

भावार्थ:-

वे गर्जकर शत्रु की सेना के बीच में कूद पड़े और अपने भारी भुजबल से उसका मर्दन करने लगे। किसी की लात से और किसी की थप्पड़ से खबर लेते हैं (और कहते हैं कि) तुम श्री रामजी को नहीं भजते, उसका यह फल लो॥4॥

दोहा :

*** एक एक सों मर्दहिं तोरि चलावहिं मुंड। रावन आगें परहिं ते जनु फूटहिं दधिकुंड॥44॥

भावार्थ:-

एक को दूसरे से (रगड़कर) मसल डालते हैं और सिरों को तोड़कर फेंकते हैं। वे सिर जाकर रावण के सामने गिरते हैं और ऐसे फूटते हैं, मानो दही के कूंडे फूट रहे हों॥4॥

चौपाई :

*** महा महा मुखिआ जे पावहिं। ते पद गहि प्रभु पास चलावहिं॥ कहइ बिभीषनु तिन्ह के नामा। देहिं राम तिन्हहू निज धामा॥1॥

भावार्थ:-

जिन बड़े-बड़े मुखियों (प्रधान सेनापतियों) को पकड़ पाते हैं, उनके पैर पकड़कर उन्हें प्रभु के पास फेंक देते हैं। विभीषणजी उनके नाम बतलाते हैं और श्री रामजी उन्हें भी अपना धाम (परम पद) दे देते हैं॥1॥

*** खल मनुजाद द्विजामिष भोगी। पावहिं गति जो जाचत जोगी॥ उमा राम मृदुचित करुनाकर। बयर भाव सुमिरत मोहि निसिचर॥2॥

भावार्थ:-

ब्राह्मणों का मांस खाने वाले वे नरभोजी दुष्ट राक्षस भी वह परम गति पाते हैं, जिसकी योगी भी याचना किया करते हैं, (परन्तु सहज में नहीं पाते)। (शिवजी कहते हैं-) हे उमा! श्री रामजी बड़े ही कोमल हृदय और करुणा की खान हैं। (वे सोचते हैं कि) राक्षस मुझे वैरभाव से ही सही, स्मरण तो करते ही हैं॥2॥

*** देहिं परम गति सो जियँ जानी। अस कृपाल को कहहु भवानी॥ अस प्रभु सुनि न भजहिंभ्रम त्यागी। नर मतिमंद ते परम अभागी॥3॥

भावार्थ:-

ऐसा हृदय में जानकर वे उन्हें परमगति (मोक्ष) देते हैं। हे भवानी! कहो तो ऐसे कृपालु (और) कौन हैं? प्रभु का ऐसा स्वभाव सुनकर भी जो मनुष्य भ्रम त्याग कर उनकाभजन नहीं करते, वे अत्यंत मंदबुद्धि और परम भाग्यहीन हैं॥3॥

*** अंगद अरु हनुमंत प्रबेसा। कीन्ह दुर्ग अस कह अवधेसा॥ लंकाँ द्वौ कपि सोहहिं कैसें। मथहिं सिंधु दुइ मंदर जैसें॥4॥

भावार्थ:-

श्री रामजी ने कहा कि अंगद और हनुमान किले में घुस गए हैं। दोनों वानर लंका में(विध्वंस करते) कैसे शोभा देते हैं, जैसे दो मन्दराचल समुद्र को मथ रहे हों॥4॥

दोहा :

दोहा :

*** भुज बल रिपु दल दलमलि देखि दिवस कर अंत। कूदे जुगल बिगत श्रम आए जहँ भगवंत॥45॥

भावार्थ:-

भुजाओं के बल से शत्रु की सेना को कुचलकर और मसलकर, फिर दिन का अंत होता देखकर हनुमान् और अंगद दोनों कूद पड़े और श्रम थकावट रहित होकर वहाँ आ गए, जहाँ भगवान् श्री रामजी थे॥45॥

चौपाई :

*** प्रभु पद कमल सीस तिन्ह नाए। देखि सुभट रघुपति मन भाए॥ राम कृपा करि जुगल निहारे। भए बिगतश्रम परम सुखारे॥1॥

भावार्थ:-

उन्होंने प्रभु के चरण कमलों में सिर नवाए। उत्तम योद्धाओं को देखकर श्री रघुनाथजीमन में बहुत प्रसन्न हुए। श्री रामजी ने कृपा करके दोनोंको देखा, जिससे वे श्रमरहित और परम सुखी हो गए॥1॥

*** गए जानि अंगद हनुमाना। फिरे भालु मर्कट भट नाना॥ जातुधान प्रदोष बल पाई। धाएकरि दससीस दोहाई॥2॥

भावार्थ:-

अंगद और हनुमान् को गए जानकर सभी भालू और वानर वीर लौट पड़े। राक्षसों ने प्रदोष (सायं) काल का बल पाकर रावण की दुहाई देते हुए वानरों पर धावा किया॥2॥

*** निसिचर अनी देखि कपि फिरे। जहँ तहँ कटकटाइ भट भिरे॥ द्वौ दल प्रबल पचारि पचारी। लरत सुभट नहिं मानहिं हारी॥3॥

भावार्थ:-

राक्षसों की सेना आती देखकर वानर लौट पड़े और वे योद्धा जहाँ-तहाँ कटकटाकर भिड़ गए। दोनों ही दल बड़े बलवान् हैं। योद्धा ललकार-ललकारकर लड़ते हैं, कोई हार नहीं मानते॥3॥

*** महाबीर निसिचर सब कारे। नाना बरन बलीमुख भारे॥ सबल जुगल दल समबल जोधा। कौतुक करत लरत करि क्रोधा॥4॥

भावार्थ:-

सभी राक्षस महान् वीर और अत्यंत काले हैं और वानर विशालकाय तथा अनेकों रंगों के हैं। दोनों ही दल बलवान् हैं और समान बल वाले योद्धा हैं। वे क्रोध करके लड़ते हैं और खेल करते (वीरता दिखलाते) हैं॥4॥

*** प्राबिट सरद पयोद घनेरे। लरत मनहुँ मारुत के प्रेरे॥ अनिप अकंपन अरु अतिकाया। बिचलत सेन कीन्हि इन्ह माया॥5॥

भावार्थ:-

(राक्षस और वानर युद्ध करते हुए ऐसे जान पड़ते हैं) मानो क्रमशः वर्षा और शरद् ऋतु में बहुत से बादल पवन से प्रेरित होकर लड़ रहे हों। अकंपन और अतिकाय इन सेनापतियों ने अपनी सेना को विचलित होते देखकर माया की॥5॥

*** भयउ निमिष महँ अति अँधिआरा। बृष्टि होइ रुधिरोपल छारा॥6॥

भावार्थ:-

पलभर में अत्यंत अंधकार हो गया। खून, पत्थर और राख की वर्षा होने लगी॥6॥

दोहा :

*** देखि निबिड़ तम दसहुँ दिसि कपिदल भयउ खभार। एकहि एक न देखई जहँ तहँ करहिं पुकार॥46॥

भावार्थ:-

दसों दिशाओं में अत्यंत घना अंधकार देखकर वानरों की सेना में खलबली पड़ गई। एक को एक (दूसरा) नहीं देख सकता और सब जहाँ-तहाँ पुकार रहे हैं॥46॥

चौपाई :

*** सकल मरमु रघुनायक जाना। लिए बोलि अंगद हनुमाना॥ समाचार सब कहि समुझाए। सुनत कोपि कपिकुंजर धाए॥1॥

भावार्थ:-

श्री रघुनाथजी सब रहस्य जान गए। उन्होंने अंगद और हनुमान् को बुला लिया और सब समाचार कहकर समझाया। सुनते ही वे दोनों कपिश्रेष्ठ क्रोध करके दौड़े॥1॥

***पुनि कृपाल हँसि चाप चढ़ावा। पावक सायक सपदि चलावा॥ भयउ प्रकास कतहुँ तम नाहीं। ग्यान उदयँ जिमि संसय जाहीं॥2॥

भावार्थ:-

फिर कृपालु श्री रामजी ने हँसकर धनुष चलाया और तुरंत ही अग्निबाण चलाया, जिससे प्रकाश हो गया, कहीं अँधेरा नहीं रह गया। जैसे ज्ञान के उदय होने पर (सब प्रकार के) संदेह दूर हो जाते हैं॥2॥

*** भालु बलीमुख पाई प्रकासा। धाए हरष बिगत श्रम त्रासा॥ हनूमान अंगद रन गाजे। हाँक सुनत रजनीचर भाजे॥3॥

भावार्थ:-

भालू और वानर प्रकाश पाकर श्रम और भय से रहित तथा प्रसन्न होकर दौड़े। हनुमान् और अंगद रण में गरज उठे। उनकी हाँक सुनते ही राक्षस भाग छूटे॥3॥

*** भागत भट पटकहिं धरि धरनी। करहिं भालु कपि अद्भुत करनी॥ गहि पद डारहिं सागर माहीं। मकर उरग झष धरि धरि खाहीं॥4॥

भावार्थ:-

भागते हुए राक्षस योद्धाओं को वानर और भालू पकड़कर पृथ्वी पर दे मारते हैं औरअद्भुत (आश्चर्यजनक) करनी करते हैं (युद्धकौशल दिखलाते हैं)। पैर पकड़कर उन्हें समुद्र में डाल देते हैं। वहाँ मगर, साँप और मच्छ उन्हें पकड़-पकड़कर खा डालते हैं॥4॥